National Journal of Multidisciplinary Research and Development
www.multidisciplinaryjournal.org
ISSN: 2455-9040
Received: 21-10-2023, Accepted: 07-11-2023, Published: 23-11-2023
Volume 8, Issue 2, 2023, Page No. 185-186

ब्रिटिश काल में कृषि का वाणिज्यीकरणः एक आलोचनात्मक अध्ययन

रविना
स्नातकोत्तर (इतिहास), महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत

सारांश
ब्रिटिश कृषि नीति का एक महत्वपूर्ण अंग भारतीय कृषि का वाणिज्यीकरण था। कृषि के वाणिज्यीकरण का अर्थ– इस प्रकार के कृषि उत्पादन की शुरूआत करना है जिसमें कृषि उत्पादों का प्रयोग व्यापारिक मुनाफे के लिए किया जा सके। प्राक् ब्रिटिश भारत में उत्पादन उन वस्तुओं का होता था जो मानव के लिए आवश्यक थी तथा जिनका प्रयोग विनिमय के लिए होता था बाज़ार के लिए नहीं, लेकिन अब किसान केवल उस वस्तुओं को उगाने लगा जिनका देशी और विदेशी बाज़ारों के दृष्टिकोण से अधिक मूल्य था। इस तरह कृषि के स्वरूप में मूलभूत परिवर्तन हुआ। भारत मुख्यतः कृषि पर आधारित देश रहा। भारत की अर्थव्यवस्था ग्रामीण समुदायों पर निर्भर थी जो प्रायः आत्मनिर्भर थे। जब अंग्रेज भारत आए तो मुख्यतः कृषि पर निर्भरता थी तथा कृषि तथा उद्योग में एक संतुलन बना हुआ था। परंतु अंग्रेजों ने अपना व्यापार–वाणिज्य के हितों के लिए भारत के तैयार माल के निर्यात की उपेक्षा की। अतः तैयार माल करने वालों का बोझ भी कृषि पर आ पड़ा। भारत के हस्तकला उद्योग नष्ट हो गए तथा भारत कच्चे माल के निर्यात के लिए मजबूर हुआ।

मूल शब्दः वाणिज्यीकरण, व्यापारिक मुनाफा, विनिमय, मूलभूत, परिवर्तन, आत्मनिर्भर

प्रस्तावना

कृषि के वाणिज्यीकरण के उत्तरदायी कारक

ब्रिटेन में औद्योगिकरण जोरों पर था और वहाँ कच्चे माल की आवश्यकता थी। अतः ऐसी फसलों के उत्पादन पर बल दिया गया जो ब्रिटिश उद्योगों एवं मजदूरों की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। भारत में पूंजीवादी व्यवस्था बढ़ने के साथ–साथ तथा नए भूमि संबंधों एवं लगान नीति के कारण किसान को अब नकद राशि की आवश्यकता थी। इसलिए किसान उन फसलों को उगाने के लिए मजबूर होने लगा जिनका बाज़ार में क्रय–विक्रय हो सके। 1853 ई. के बाद ब्रिटिश पूंजीपतियों द्वारा भारत में पूंजी निवेश के करण नील, चाय, कॉफी और रबर जैसी नकदी फसलों की खेती पर जोर दिया गया। यातायात सुविधाओं का विकास भी कृषि के वाणिज्यीकरण में सहायक सिद्ध हुआ। अब शहर–ग्राम संबंधों में अलगाव की स्थिति समाप्त हुई। गांवों व शहरों के आपस में जुड़ जाने से भी कृषि के वाणिज्यीकरण को बढ़ावा मिला। ईस्ट इंडिया कंपनी के व्यापार का एक महत्वपूर्ण पहलू भारतीय वस्तुओं के निर्यात करना तथा निर्यात के माध्यम से लाभांश प्राप्त करना था। और निर्यात के अंतर्गत कृषि उत्पादों के निर्यात को महत्व दिया जाता था। यह निर्यात कृषि के वाणिज्यीकरण के माध्यम से तेजी से संभव था।

प्रक्रिया

नकदी फसलों, जैसे चाय, कॉफी, अफीम, कपास आदि की खेती पर बल दिया गया।

- क्षेत्र–विशेष की भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखकर विशेष प्रकार के फसल उत्पादन पर बल दिया गया, जैसे– महाराष्ट्र में काली मिट्टी की उपलब्धता के कारण कपास की खेती पर बल, बंगाल में केवल जूट के उत्पादन पर, कर्नाटक में कॉफी पर तथा अफीम के व्यापार के लिए पोस्त की खेती को बनारस, बिहार, बंगाल एवं मालवा में बढ़ावा दिया गया।
- सरकार द्वारा इन कृषि उत्पादों को बढ़ाने के लिए अग्रिम राशि भी दी गई। सिंचाई की सुविधाएँ प्रदान की गई। इसके लिए प्रांतीय स्तर पर लोक निर्माण विभाग की स्थापना की गई।
- सरकार द्वारा रेलवे का विकास एवं निर्माण किया गया।
- कृषि उत्पाद पर निर्यात शुल्क को बहुत कम रखा गया।

परिणाम

नकारात्मक

कृषकों की गरीबी और ऋणग्रस्तता को बढ़ावा मिला क्योंकि व्यापारी वर्ग खड़ी फसलों को सस्ते दाम पर ले लेते थे और कृषक अपनी तत्कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी फसल मंडी में न ले जाकर कटाई के समय खेत में ही बेच देते थे। फसले प्रायः औद्योगिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उगाई जाती थी। अतः खाद्यान्नों की भारी कमी होने लगी। फलतः अकालो की बारंबारता में वृद्धि हुई और लाखों लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। वस्तुतः अकाल तो प्राक् ब्रिटिश भारत में भी पड़ते थे। लेकिन इसका कारण धनाभाव न होकर यातायात के साधनों का अभाव होता था। साथ ही प्राकृतिक कारण भी होते थे, जबकि ब्रिटिश औद्योगिक एवं कृषि नीति थी। किसानों को साहूकारों पर निर्भरता बढ़ती गई, क्योंकि नकदी फसलों की खेती में अत्यधिक लागत आती थी और उन्हें साहूकारों से अग्रिम राशि लेनी पड़ती थी। फलतः किसानों का शोषण बढ़ा। कृषि के वाणिज्यीकरण का स्वरूप औपनिवेशिक था इसलिए भारत का कृषिगत ढांचा इंग्लैंड के उद्योगों की दया पर निर्भर हो गया। कृषि का व्यवसायीकरण स्वाभाविक रूप से नहीं हुआ बल्कि सरकारी नीति द्वारा थोपा गया था। फलतः इसका लाभ किसानों को मिला, क्योंकि वहाँ कृषि की आंतरिक पैदावार में वृद्धि कृषि उत्पादन के मूल्यों में वृद्धि के साथ साथ घटित हुई थी। इसके साथ ही इंग्लैंड में खेती के लिए नए–नए वैज्ञानिक तरीके अपनाए गए और फसलों का उत्पादन स्थानीय जरूरतों के संदर्भ में किया गया। यह ऐतिहासिक प्रक्रिया भारत में होने वाले कृषि के व्यवसायीकरण में आरंभ से ही गायब थी।

सकारात्मक

कृषि के वाणिज्यीकरण से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अलगाव की स्थिति समाप्त हुई। विभिन्न क्षेत्रों का आपसी जुड़ाव हुआ, ग्रामीण–शहरी सम्पर्क बढ़ा, अर्थव्यवस्था एकीकृत हुई। इससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास का आधार तैयार हुआ। भारतीय

अर्थव्यवस्था विश्व अर्थव्यवस्था से जुड़ गई। इसके प्रभाव से उच्चस्तरीय सामाजिक एवं आर्थिक सरंचनाओं का विकास हुआ। बढ़ती हुई आर्थिक परेशानियों एवं यातायात में सुधार के कारण गाँव–गाँव और गाँव–शहर परस्पर समीप आए। उनमें आपसी सहयोग की भावना बढ़ी। इस सहयोग से राजनीतिक चेतना का प्रादुर्भाव हुआ जिसने किसानों को शोषणकारियों के विरूद्ध विद्रोह के लिए तैयार किया। फलतः बहुत सारे काश्तकारी अधिनियम पास किए गए, किसानों द्वारा शोषणकारी सरकार का संगठित रूप से विरोध करने के लिए किसान संगठन भी बने। विशेष क्षेत्रों में फसल उत्पादन से विशेषीकृत क्षेत्र का विकास हुआ।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर कृषि का वाणिज्यीकरण ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों से परिचालित था। फलतः इसका लाभ मुख्यतः इंग्लैंड और अंग्रेजों को मिला। यह एक थोपी गई प्रक्रिया थी। जिसमें किसानों का अत्यधिक शोषण हुआ और जो लाभ हुआ वह लाभ ब्रिटिश नीति का उद्देश्य नहीं था और यह लाभ भी हानि की तुलना में नगण्य था।

संदर्भ सूची

1. Arokiswami M, Royappa TM. The Modern Economic History of India Madras, 1955.
2. Dutt RC. The Economic History of India, Delhi, 1989.
3. Gadgil DR. The Industrial Evolution of India, Calcutta, 1950.
4. Rayachaudhari SC. History of Modern India (1707-1947.
5. Delhi, 1981
6. Vera Anstey, Dr. : Economic Development in India
7. (London, 1939)
8. Desai TB. Economic History of India under the British.
9. Griffith, Percival: The British Impact on India (London, 1965.
10. Kaushal G. Economic History of India